Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

मनोवैज्ञानिक उपन्यास और उसकी परम्परा

डॉ. कमलेन्द्र चक्रपाणि
एम.ए.नेटए पी–एच.डी

सारांश - स्वातंत्र्योत्तर काल के उपन्यासों में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मनोविज्ञान के तत्व मौजूद रहते ही हैं। यह दौर विविधताओं का दौर था जिसमें भारतीय जीवन के बदलते परिवे**श**, जनता की निर्माणात्मक चेतना, सामाजिक संघर्ष, व्यक्ति तथा परिवार के विभिन्न सम्बंध-विषे**श** तथा तनाव, परम्परा और रुढ़िवाद के प्रति विद्रोह, आधुनिकता का आकर्षण, विभिन्न प्रकार के स्त्री-पुरुष सम्बंध, तनाव भरे माहौल में पलते हुए बच्चों की मनोवैज्ञानिक स्थितियाँ आदि विषमताएँ थीं और इन्हीं विषयों को केंद्र में रखकर उपन्यासकारों ने अपने चरित्रों को उभारना प्रारंभ किया। इस **शृं**खला में सुरेन्द्र वर्मा, मोहन राके**श**, राजेन्द्र यादव, विनोद कुमार **शु**क्ल आदि के नाम उल्लेखनीय हैं

मुख्य शब्द- मनोवैज्ञानिक, उपन्यास, परम्परा, चेतना, सामाजिक,परिवार, मनोविज्ञान, आधुनिकता।

मनोवैज्ञानिक कहने का तात्पर्य उन उपन्यासों से है जो मूलतः मनोविश्लेषण पर आधारित होते हैं। मनोविज्ञान साहित्य के लिए कोई नई वास्तु नहीं है, वह तो आदिकवि वाल्मीकि से लेकर आज तक के सभी कवियों और साहित्यकारों की कृतियों में लक्षित होता है, किन्तु मनोविश्लेषणवाद अपने सीमित अर्थ में आधुनिक है। मनोविश्लेषणवाद मस्तिष्क के चेतन, उपचेतन और अचेतन, इन तीन विभागों में अचेतन को अधिक महत्तव देता है। यही अचेतन हमारे सारे कार्य-व्यापारों, हमारे सारे नैतिक आचारों का निर्माता और नियंता है।

इसी मनोविज्ञान को विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से पारिभाषित किया है। फ्रायड इसे यौन वासनाएं मानते हैं। उनके अनुसार-"मस्तिष्क के वास्तविक कर्म-तर्क से नहीं, प्रवृत्ति और आवेग से संचालित होते हैं। मस्तिष्क स्पंदनों, विचारों, बोध,ज्ञान और तार्किक क्रमों या कुछ निश्चित आध्यात्मिक

सारों का समुच्चय नहीं है बल्कि यह एक गहरा उर्मिल सिंधु है जिसके रहस्यमय तत्व उसके चेतन स्तर या तर्क में उपलब्ध नहीं होते, बल्कि पूर्ण अचेतन और प्रवृत्तियों की गहराई में ही प्राप्त होते हैं।"[१](हिंदी उपन्यास एक अंतर्यात्रा, रामदरश मिश्र, पृष्ठ-८१)

एडलर मनोविज्ञान को हीनता की भावना मानते हैं। उनके अनुसार-"व्यक्ति संसार में कमजोर, महत्त्वहीन, और असहाय रूप में आता है। प्रकृति से लड़ने में वह असमर्थ होता है और भोजन, वस्त्र और शरण के लिए अपने से बड़ों पर अबलम्बित रहता है। दूसरी ओर वह देखता है कि उसके बड़ों के पास अधिक शक्ति है, वे विश्व के प्रति अधिक ज्ञान रखते हैं और जैसे चाहते हैं रहते हैं। इन सब कारणों से वह बड़ों की शक्ति से अभिभूत हो उठता है और वह एक हीनता की भावना का अनुभव करने लगता है। अपनी हीनता की क्षतिपूर्ति के लिए वह अपने वातावरण को प्रभावित करना चाहता है। वह अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए तथा साथियों की प्रशंसा प्राप्त करने के लिए प्रयास करता है।"[२] (वही)

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का दौर यूं तो प्रेमचंद के उपन्यासों से ही आरम्भ हो गया था किन्तु आलोचकों द्वारा प्रेमचंद के इस पक्ष को सिरे से नकार दिया गया। उनके उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक पक्ष स्पष्ट रूप से उभर कर नहीं आया जितना कि सामाजिक यथार्थ का पक्ष। प्रेमचंद के उपन्यासों में सामाजिक जीवन अपने समस्त संबंधों, जटिल प्रश्नों, समस्याओं और आकांक्षाओं के साथ उभरा है। कुल मिलाकर प्रेमचंद अचेतन की अपेक्षा व्यक्ति के चेतन पर अधिक बल देते हैं। मुख्य रूप से मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का लक्ष्य पात्रों का मनोवैज्ञानिक शोध करना है। मनुष्य वास्तव में कैसा है ? इसका पता लगाना ही उन उपन्यासों का कार्य होता है। जैनेन्द्र के उपन्यासों ने सर्वप्रथम प्रेमचंद की परंपरा को तोड़ने का काम किया और एक नई परंपरा का सूत्रपात किया। वैसे जैनेन्द्र के उपन्यासों पर फ्रायड के प्रभाव को भी हम नकार नहीं सकते हैं। पहले कुछ दशक में फ्रायड से प्रभावित होकर जिस कथा-साहित्य की रचना की गई, उसकी पृष्ठभूमि जैनेन्द्र पहले से ही तैयार कर चुके थे। जहाँ प्रेमचंद ने समाज के साथ व्यक्ति के एकीकृत होने के प्रश्न को अधिक महत्त्व दिया, वहाँ जैनेन्द्र ने व्यक्ति की गुम होती हुई पहचान को उभारकर सामने रखा। उनके उपन्यासों में अनमेल विवाह या दहेज़-प्रथा जैसी समस्याएं नहीं हैं, बल्कि विवाह स्वयं में एक समस्या है, क्योंकि सारी अनिश्चितताएं उसके बाद ही

आरम्भ होती हैं। किन्तु जिस मुक्ति की समस्या पर उन्होंने बल दिया, उसके आड़े आते हैं रूढ़ संस्कार, और इस प्रकार जैनेन्द्र का प्रत्येक उपन्यास अंतर्विरोधों का उपन्यास बन गया। मात्र नारी-पुरुष समस्या को आधार बनाकर उपन्यास लिखने वाले जैनेन्द्र सर्वप्रथम हैं. अपने उपन्यास 'सुनीता' में उन्होंने एक नारी तथा पुरुष की अतृप्त काम-वासना को दार्शनिक आवरण में प्रस्तुत किया है. 'सुनीता' की प्रधान नायिका सुनीता आधी रात तक पर-पुरुष के साथ निर्जन स्थान में पहुंचकर अपनी नारी-देह को पूर्णतया अनावृत कर उसे आमंत्रित करती है. तो 'तपोभूमि' की धरिणी अबैध सम्बन्ध से गर्भवती हो तथा बाद में वैश्या बनकर भी जल में कमल-पत्र के सामान निर्मल है. 'त्यागपत्र' की मृणाल परिस्थितियों से बाध्य अनेक पुरुषों का आश्रय लेकर भी महिमामयी ही बानी रही. 'सुखदा' पति और पुत्र के रहते हुए भी अपने सम्पूर्ण मन से लाल की ओर उन्मुख है. 'व्यतीत' की अनिता अपने निष्फल प्रेमी के जीवन को व्यवस्थित करने की चिंता में पागल होकर कह उठती है-"कहती हूँ. मैं यह सामने हूँ. मुझको तुम ले सकते हो. समूची को जिस विधि से चाहे ले सकते हो."३ (वही) इन उपन्यासों के अतिरिक्त जैनेन्द्र के उपन्यासों में 'कल्याणी', 'विवर्त', 'जयवर्धन' आदि के नाम उल्लेखनीय हैं. इन उपन्यासों में भी स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध परस्पर मनोविज्ञान, दार्शनिकता, वैयक्तिकता आदि के माध्यम से विविध रूपों में उभरी है. उनके नारी-पात्र यदि एक ओर समाज की मर्यादाओं को बनाये रखना चाहते हैं तो दूसरी ओर अपने अस्तित्व की पहचान भी करना जानते हैं. ऐसी स्थिति में आत्म-यातना के अतिरिक्त और कोई राह शेष नहीं रहती . उनके पात्र समाज को न तोड़कर स्वयं टूट जाते हैं, किन्तु अपने को तोड़कर किसी को निर्मित नहीं करते.

जैनेन्द्र की ही भांति इलाचंद्र जोशी के उपन्यास भी कथा-विन्यास की दृष्टि से सामाजिक उंपन्यासों की परम्परा में ही आते हैं. अर्थात उनमें भी कथा की मांसलता, घटनाओं की संकुलता, विविध कथा-मोड़, आरोह-अवरोह आदि उसी तरह पाए जाते हैं जैसे सामाजिक उंपन्यासों में. यह दीगर बात है कि मनोवैज्ञानिक कहे जानेवाले जोशी जी के उपन्यासों में आकस्मिकता या संयोग के तत्व उसी तरह पाए जाते हैं जैसे प्रेमचंदकालीन या रोमांटिक उपन्यासों में. जोशी जी के उपन्यासों के साथ जो सबसे बड़ी बात है वह यह है कि उनके उपन्यासों का मनोविज्ञान किताबी नज़र आता है तात्पर्य अवधारणामूलक. यही कारण है कि जहाँ अज्ञेय और जैनेन्द्र के उपन्यासों के पात्र अपने में सीमित रहते

हुए भी अपने जीवंत व्यक्तित्व के कारण बहुत सजीव लगते हैं वहीँ जोशी जी के पात्र सामाजिक जीवन से बहुत कुछ जुड़ते हुए भी यांत्रिक लगते हैं. उनकी यात्रायें और परणातियाँ सुनियोजित लगती हैं. इतना ही नहीं जोशी जी वशीकरण-हिप्नोटिस्म आदि का भी प्रयोग करते हैं. जहाँ तक मनोविश्लेषण के सिद्धांतों का प्रश्न है, कहा जा सकता है कि जोशी जी पर तीनों प्रमुख मनोविश्लेषणवादियों क्रमशः फ्रायड, एडलर और युंग का प्रभाव है किन्तु वह सबसे निकट युंग के हैं क्योंकि वे उसके सामूहिक अवचेतनवाद से बहुत दूर तक सहमत हैं. जोशीजी के उपन्यासों में 'परदे की रानी', 'प्रेत की छाया', 'सन्यासी', 'निर्वासित', 'जिप्सी', 'जहाज का पंछी' आदि के नाम उल्लेखनीय हैं. विशेष रूप से उनके 'सन्यासी','परदे की रानी' और 'प्रेत की छाया' में उन्होंने एब्नार्मल चरित्रों को दिखाया है. इनके पात्र किसी-न-किसी मनोवैज्ञानिक ग्रंथि के शिकार हैं. जब तक उन्हें ग्रंथि का रहस्य मालूम नहीं होता तब तक वे अनेक प्रकार के असामाजिक कार्यों में संलग्न रहते हैं, किन्तु जिस क्षण उनकी ग्रंथियों का मूलोद्घाटन हो जाता है, उसी क्षण वे सामान्य स्थिति में पहुँच जाते हैं. 'सन्यासी' में आत्महीनता की ग्रंथि है तो 'प्रेत की छाया' में इडिपस ग्रंथि और 'परदे की रानी' के पात्र भी मानसिक कुंठाओं से ग्रस्त हैं. फ्रायड के मनोविश्लेषण का मूलाधार काम-भावना है उसी को केंद्र में रखकर तीनों उपन्यास के ताने-बाने बुने गए हैं. किन्तु क्योंकि सभी पात्र मनोविश्लेषण के किताबी ढांचे में ढले गए हैं, फलस्वरूप वे अपने को स्वतंत्र रूप से विकसित नहीं कर पाते, और इसीलिए ये उपन्यास सहज नहीं बन पाए हैं.

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की परम्परा में अज्ञेय शीर्ष पर हैं. हिन्दी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों को प्रौढ़ रूप देने का श्रेय अज्ञेय को ही है. उन्होंने अपने उपन्यासों द्वारा मनोविज्ञान को एक अलग दृष्टि प्रदान की. इनके उपन्यास सर्वत्र और सभी रूपों में सर्जनात्मकता की चेतना से संपन्न हैं. अज्ञेय के सारे उपन्यास स्वयं लेखक के व्यक्तित्व के भीतर से फूटे हैं. जैनेन्द्र और इलाचंद्र जोशी अपने पात्रों में स्वयं नहीं होते, उनके पात्र एक विशेष प्रकार के प्रयोजन की पूर्ति के लिए गढ़े गए होते हैं. इन पत्रों में उपन्यासकार जो वस्तु आरोपित करता है वह जीवन की आंच के अभाव में नंगी दिखने लगती है क्योंकि उन पात्रों के साथ लेखक स्वयं जिया ही नहीं होता या यों भी कह सकते हैं कि वे पात्र जीवन जिए नहीं होते. अज्ञेय के उपन्यासों में जो एक सबसे खास बात नज़र आती है वह है इनके उपन्यास इनके व्यक्तित्व के माध्यम से फूटे हैं. ऐसा लगता है मानो अपने सारे उपन्यासों में नायक के रूप में

वह स्वयं हो. चूँकि वह स्वयं हैं और उनकी स्वयं की जिंदगी अनुभूतियों की दृष्टि से बड़ी समृद्ध जिंदगी रही है -यानि उन्होंने जीवन जिया है, और जीवन जीकर उसके सत्यों को पाया है-अतः उनके उपन्यासों में जीवन की सही अनुभूति और संवेदना भी उभरती है. अज्ञेय कृत 'शेखर : एक जीवनी' के प्रकाशन के साथ ही हिन्दी उपन्यास की दिशा में एक नया मोड़ आया. इस उपन्यास को लेकर आलोचकों में भरी मतभेद रहा. किसी ने इसे प्रकाशमान पुच्छल तारा कहकर प्रशंसा की, तो किसी ने अतिशय आत्मकेंद्रित बताकर इसके कथानक को असम्बद्ध और विश्रृंखलित माना. 'शेखर : एक जीवनी' दो खण्डों में प्रकाशित हुआ. जीवनी के पहले भाग में शेखर अपने बाल-जीवन की छोटी-से-छोटी घटनाओं की भी सतर्कता से छानबीन करता है. उसके बालमन की संचरण-भूमियों का मनोविश्लेषण के निष्कर्षों के प्रकाश में अध्ययन करने का प्रयत्न किया गया है. इस प्रयत्न में उसकी अनेक छोटी-बड़ी स्मृतियाँ सतर्कता के साथ जीवनी में अंकित हैं. वह सामान्य बालकों से किंचित भिन्न है. उसमें प्रारम्भ से ही वस्तुओं को उनके वास्तविक स्वरुप में बनाने की उत्कट जिज्ञासा है और परिणास्वरूप वह कभी-कभी ऐसी बातें भी जानना चाहता है जो उसे न जाननी चाहिए. उदहारण के लिए उसकी यह जिज्ञासा की माँ के पेट से बच्चे कैसे पैदा होते हैं ? इस प्रकार की अवांछनीय उत्सुकता का चित्रण न किया जाता तो अच्छा था. बाल शेखर के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह अनौचित्य से किसी प्रकार का समझौता नहीं कर पाता. मार-पीट, डांट-फटकार आदि उपाय उसके लिए व्यर्थ सिद्ध हो जाते हैं. अपनी सहज प्रवृत्ति के कारण वह जिस बात को अनुचित समझता है, उसका जी-जान से विरोध करता है. उसके चरित्र का दूसरा पक्ष यह है कि प्यार एवं सहानुभूति से वह वश में कर लिया जा सकता है. शेखर के जीवन की अधिकतर ऐसी ही घटनाएं वर्णित हैं, जिससे बाल-मनोवृत्ति का वैज्ञानिक विश्लेषण सामने आ जाय. इसी उपन्यास का दूसरा खंड अधिक व्यवस्थित नज़र आता है. पहले भाग का विद्रोह सृजन की भूमिका मालूम पड़ता है क्योंकि इसमें उसका बिखरा व्यक्तित्व संघटित होकर रचनात्मक बनता है, किन्तु राष्ट्र, राष्ट्रीयता, भाषा आदि के सम्बन्ध में उसके विचार क्रियात्मकता से न जुड़ने के कारण सतही प्रतीत होते हैं. दूसरी ओर शशि और शेखर के सम्बन्ध को लेकर जो आपत्तियां उठाई जाती हैं, वे नैतिक अधिक हैं, वास्तविक काम. जिस प्रामाणिक अनुभूति की चर्चा आज की रचनाओं के सन्दर्भ में

की जाती हैं वह इस उपन्यास में पहली बार मिलती है. 'नदी के द्वीप' और 'अपने-अपने अजनबी' उपन्यास भी अज्ञेय के मनोवैज्ञानिक होने की पुष्टि करते हैं.

इन उपन्यासकारों के अतिरिक्त और भी अन्य महत्त्वपूर्ण उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में मनोविज्ञान को स्थान दिया है. भगवतीचरण वर्मा का उपन्यास 'रेखा' इसकी पुष्टि करता है. इस उपन्यास में रेखा भरद्वाज जो कि २० वर्षीय युवती है, भावों में बहकर ५३ वर्षीय विद्वान प्रोफेसर प्रभाशंकर से परिणय-सूत्र में बंधती है, किन्तु जैसे-जैसे समय बीतता है रेखा अनुभव करती है कि प्रभाशंकर उसकी यौनक्षुधा को तृप्त करने में असमर्थ है. अतः रेखा के भाई का दोस्त सोमेश्वर दयाल जब उसे अपने बाँहों में भरता है, तब वह उसे ऊपर से तो मना करती है, लेकिन भीतर-ही-भीतर उस पागल प्रवाह में बाह जाती है. वैसे इस घटना के बाद उसका मन ग्लानि से भर जाता है और वह ठान लेती है कि अब वह सोमेश्वर से कभी नहीं मिलेगी लेकिन अगले ही दिन जब सोमेश्वर को दिए गए समय का क्षण आता है तो उसके मन में भयानक द्वंद्व चलने लगता है. इस प्रकार मनोविज्ञान से प्रभावित उपन्यासों में पात्रों के मन के भीतर होनेवाली हलचलों को उपन्यासकारों ने बखूबी दिखाने का काम किया है.

स्वतंत्रायोत्तर काल के उपन्यासों में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मनोविज्ञान के तत्व मौजूद रहते ही हैं. यह दौर विविधताओं का दौर था जिसमें भारतीय जीवन के बदलते परिवेश, जनता की निर्माणात्मक चेतना, सामाजिक संघर्ष, व्यक्ति तथा परिवार के विभिन्न सम्बन्ध विशेष तथा तनाव, परम्परा और रूढ़िवाद के प्रति विद्रोह, आधुनिकता का आकर्षण, विभिन्न प्रकार के स्त्री-पुरुष सम्बन्ध, तनाव भरे माहौल में पलते हुए बच्चों की मनोवैज्ञानिक स्थितियां आदि विषमताएं थीं और इन्हीं विषयों को केंद्र में रखकर उपन्यासकारों ने अपने चरित्रों को उभारना प्रारम्भ किया. इस श्रृंखला में सुरेंद्र वर्मा, मोहन राकेश, राजेंद्र यादव, विनोद कुमार शुक्ल आदि के नाम उल्लेखनीय हैं.

सन्दर्भ-ग्रन्थ

१. हिन्दी उपन्यास एक अंतर्यात्रा, रामदरश मिश्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,(१९८२)
२. हिन्दी उपन्यास, शिवनारायण श्रीवास्तव, सरस्वती मंदिर प्रकाशन, वाराणसी
३. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. नागेंद्र, मयूर पेपरबैक्स, नॉएडा, (१९९१)
४. हिन्दी साहित्य का इतिहास, कमल नारायण टंडन/पल्लवी टंडन, क्लासिक पब्लिशिंग कम्पनी, कर्मपुरा , नई दिल्ली .